विदुर

VIDURA

JOURNAL OF THE PRESS INSTITUTE OF INDIA-RIND
Volume : 35 Issue : 3 July - Sept. 1998

आइए तोड़ें सूचना का एकाधिकार

दीपक भारती

सूचना देने का कर्तव्य और सूचना पाने का अधिकार - ये दो ऐसी चीजें हैं जो सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक समस्याओं के संदर्भ में किसी भी नागरिक को किसी निश्चित निष्कर्ष तक पहुँचने में मदद करती हैं। उन्हीं निष्कर्षों के आधार पर कोई व्यक्ति या संगठन समर्थन या विरोध के कार्यक्रमों का मात्र क्रियान्वयन ही नहीं करता, बल्कि व्यक्ति अपने व्यक्तित्व को और समाज अपनी सामूहिक कृति को एक सांस्कृतिक आवरण भी देता है। लेकिन बिडम्बना यह है कि सूचना संबंधी कर्तव्य और अधिकार का कोई उल्लेख भारतीय संविधान में नहीं है। नतीजा यह है कि हमारे बहुत सारे महत्वपूर्ण फैसले आये दिन कही-सुनी बातों के आधार पर, आधी-अधूरी व गलत सूचनाओं के आधार पर और अर्द्धसत्य व अफवाहों के आधार पर हो जाते हैं और अक्सर इन फैसलों के दूरगामी नकारात्मक प्रभाव ऐसे हो जाते हैं कि वह सामाजिक तनाव व भ्रष्टाचार के मूल स्रोत बन जाते हैं।

इस अधिकार की सबसे बड़ी उपयोगिता यह है कि सरकारी व गैरसरकारी उपक्रमों के तमाम संस्थानों को अपनी संचिकाएँ सार्वजनिक व पारदर्शी करनी पड़ेगी। यह कहने में और साबित करने में उन्हें मनों पानी भरना पड़ेगा कि वे अमुक सूचना सार्वजनिक नहीं करेंगे, क्योंकि यह जन हित में नहीं है या इससे देश की सुरक्षा को खतरा है। उदाहरण के लिए भारत के पूर्व प्रधान मंत्री चरण सिंह ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'इंडिया'ज इकॉनॉमिक पॉलिसी' में लिखा है कि सरकार ने एक कंपनी को कई छूटों के अलावा 577 एकड़ जमीन एक रुपये के किराये पर 30 साल के लिए दे दी और ढाई करोड़ रुपयों का ऋण रियायती ब्याज की दर पर दिलवाया। हिंडालको कंपनी, रेणुकूट को कई वर्षों तक 2 पैसे प्रति यूनिट से बिजली दी जाती रही, जिसे 1981 के आस-पास 10 पैसा किया गया, जबकि उन्हीं दिनों सामान्य उपभोक्ता के लिए बिजली बनारस में 35 से 11 पैसे प्रति यूनिट मिल रही थी। यहाँ यह भी ज्ञातव्य है कि बिड़ला की हिंडाल्को कंपनी और रेणुकूट व बनारस के उपभोक्ता दोनों को रिहन्द पनबिजलीघर से ही बिजली मिल रही थी। इसी तरह बिड़ला पेपर मिल को जब सरकार जंगल का बाँस 2 पैसे में दे रही थी, सामान्य जन वही बाँस दो रुपये में खरीद रहा था। सूचना का अधिकार मिलने पर सरकार को यह बताना लाजिमी हो जायेगा कि वह इस तरह का फैसला किन तर्कों, किन रपटों व दस्तावेजों के आधार पर लेती है? अक्सर गंभीर आर्थिक अंतर्विरोधों को उजागर करनेवाले दस्तावेज उच्चस्तरीय सरकारी गोपनीय (तथाकथित) तहखानों में पड़े रहते हैं। सूचना का अधिकार सामान्य जन को यह अवसर देगा कि वह ऐसे दस्तावेजों तक अपनी पहुँच बनाये, उनकी सार्वजनिक समीक्षा करे और उन पर अपनी राय जगजाहिर करे। इसी प्रकार चौथी पंचवर्षीय योजना तैयार करने के लिए तत्कालीन योजना समिति ने एक उपसमिति बनायी थी जिसके पृष्ठ 15 व 16 पर कहा गया है कि किसान की उपज को उसके उत्पादन खर्च की पूर्ति हो, ऐसी कीमत देना व्यावहारिक नहीं है। दूसरी ओर एक बार जब एक सांसद ने संसद में पूछा कि भारत में बनी कार की कीमत किस आधार पर तय की जाती है, तो सरकार का उत्तर था कि यह बताना सार्वजनिक हित में नहीं होगा। सूचना का अधिकार मिल जाने पर सरकार को उन तमाम जानकारियों को सार्वजनिक करना पड़ेगा, जिनके आधार पर वह फैसले लेती है।

कानूनी पक्ष

अब हम इस अधिकार के कानूनी पक्ष को देखें। उच्चतम न्यायालय के पूर्व न्यायाधीश श्री पी. एन. भगवती ने 1981 में अपने एक फैसले में कहा था कि मैं यह मानता हूँ कि मानव जीवन का लोकतांत्रिक आधार सूचना का अधिकार या सूचना तक पहुँचने का अधिकार ही है। वास्तव में सच्चा लोकतंत्र प्रभावशाली तरीके से तब तक नहीं काम कर सकता जब तक इस अधिकार का बिना किसी रुकावट के मुक्त अभ्यास हो सके।

भारतीय संविधान की धारा 19 (1) खण्ड 'क' में बोलने का और अपनी भावना व्यक्त करने का अधिकार दिया गया है। सूचना का अधिकार दरअसल इस मौलिक अधिकार का ही निहितार्थ है। लेकिन किसी भी स्तर पर संविधान के किसी भी हिस्से में या बाद में सरकार के द्वारा बनाये गये कानूनों व नियमावलियों में इसका कोई उल्लेख तक नहीं हुआ। यही कारण है कि सरकार इस सूचना के अधिकार को, जो भारतीय संविधान के मौलिक अधिकार में अप्रत्यक्ष तौर दिया ही हुआ है, मानने को या उसके प्रति बाध्य होने को तैयार नहीं है। बल्कि उलटे सरकार में यह प्रवृत्ति दिखाई देती है कि जब कभी उसके लिए कोई घटना असुविधाजनक हो जाती है तो वह देशहित, सार्वजनिक हित या राष्ट्रीय सुरक्षा के नाम पर उस घटना से संबंधित सूचना को रोक लेती है। स्थिति यहाँ तक पहुँचती है कि वह संसद और न्यायपालिका में भी सूचना देने से इनकार कर देती है और यहाँ तक कि खुद के द्वारा गठित आयोगों की रपटों को भी वह संसद के पटल पर नहीं रखती है और सरकार की इस क्रिया को कानून - सम्मत और नियमानुकूल मान लिया जाता है। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि सरकार के बड़े अधिकारी या राजनेता अपने हितों और पदों को सुरक्षित रखने के लिए एक ओर जहाँ सूचनाओं को सार्वजनिक करने से इन्कार कर देते हैं, वहीं दूसरी ओर कभी उन्हीं हितों को सुरक्षित रखने के लिए सूचनाओं को सार्वजनिक कर देते हैं। इस तरह सूचना देने या नहीं देने का जो उनका एकाधिकार है, वह एकाधिकार एक तरह से राजनैतिक हथियार

बन जाता है। इस राजनैतिक हथियार को कानूनी सहारा ऑफिशियल सीक्रेट्स एक्ट, 1923 से मिलता है, जिसका वह मामूली बहानों पर उपयोग कर लेती है, जब भी किसी नागरिक के द्वारा कोई सूचना माँगी जाती है।

तीन कारण

मुख्य रूप से तीन ऐसे कारण हैं जो बताते हैं कि किसी भी लोकतांत्रिक देश में सरकारी कार्यक्रमों के संचालन के दौरान तत्संबंधी सूचनाएँ किसी नागरिक को क्यों मिलनी ही चाहिए। पहला कारण यह है कि अगर रहस्य के घेरे में कोई सरकार काम करेगी तो उसके दुरुपयोग की संभावना बहुत ज्यादा है। सूचना का अधिकार इस मनमौजीपन, भ्रष्टाचार और भाई-भतीजावाद के खिलाफ एक ढाल का काम करता है और गुप्तता और अँधेरेपन पर हमला करता है। दूसरा कारण यह है कि यह अधिकार उस असंतुलन को भी समाप्त करता है जिसमें एक ओर सरकार विभिन्न स्रोतों से व्यापक पैमानों पर इकट्ठी सूचनाओं को देने से कतराती है और दूसरी ओर वह किसी भी व्यक्ति से तमाम सूचनाओं को प्राप्त कर लेती है या प्राप्त करने की मंशा ही नहीं रखती है, बल्कि इसे अपना अधिकार भी मान लेती है। तीसरा कारण यह है कि किसी भी लोकतांत्रिक सरकार की उपस्थिति का सारतत्व यह है कि जनता यह जाने कि वे कौन-सी परिस्थितियाँ हैं जिनमें उसके नाम पर फैसला लिये जा रहे हैं। तभी उसे यह अवसर मिल सकेगा कि वह सरकार के ऐसे फैसले के खिलाफ जो उसे गलत लगे, अपने विचार प्रकट कर सके और जनमत बना सके। साथ ही अगर सरकार के फैसले से वह सहमत हो तो वह उपलब्ध जानकारियों के आधार पर सरकार के समर्थन में भी जनमत बना सके।

ग्रामीण विकास संबंधी सुनिश्चित रोजगार योजना, आई. आर. डी. पी. , दवाकरा आदि सरकारी कार्यक्रमों का अनुभव ऐसा है कि तत्संबंधी विस्तृत जानकारी उन्हें भी नहीं हो पाती है जिनके लिए वह योजना होती है। किसी कार्यक्रम में समय-सीमा कितनी है, मजदूरी या स्टाइपेंड आदि कितना है, मानव दिवस कितने हैं, क्या-क्या सामग्री है और उसकी गुणवत्ता क्या निर्धारित की गयी है - इस प्रकार की जानकारियों के अभाव में ग्रामीण जन न तो निगरानी रख पाते हैं और न ठेकेदारों व सरकारी अधिकारियों की मिलीभगत ही रोक पाते हैं। इसलिए जरूरी है कि हर व्यक्ति को यह अधिकार हो कि वह कुछ निश्चित रकम शुल्क के तौर पर जमा कर तत्संबंधी तमाम जानकारी समय पर सरकार से प्राप्त कर सके।

जनतंत्र का अर्थ ही जनता द्वारा जनता के लिए शासन होता है। अतः सत्ता में पारदर्शिता होना यानी सबको यह जानकारी होना कि किस तरीके से वह संचालित हो रही है, आवश्यक है। लोकतंत्र में सत्ता पर काबिज लोग, उसके संचालक जनता के ट्रस्टी से ज्यादा कुछ भी नहीं होते हैं। अतः सिर्फ चुनाव के वक्त अथवा एक खास अंतराल के बाद ही नहीं, बल्कि समय-समय पर जो हो रहा है और जो नहीं हो रहा है, उस पर सवाल करने का अधिकार जनता को होना चाहिए।

यहाँ यह कहना असंगत नहीं होगा कि सूचना के अधिकार का संबंध केवल सरकार से ही नहीं है, बल्कि बहुराष्ट्रीय निगमों, निजी उपक्रमों और गैरसरकारी संगठनों से भी है। चाहे राजनैतिक हो या सामाजिक, शैक्षणिक हो या सांस्कृतिक, सभी सरकारी और गैरसरकारी स्तरों पर पारदर्शिता और प्रामाणिकता की जरूरत है, क्योंकि इसके बिना लोकतंत्र का सच्चा और सही अस्तित्व संभव नहीं है और यही दो गुण ऐसे हैं जो सूचना के अधिकार को बुनियादी अधिकार बनाते हैं।

लोकतंत्र का अर्थ केवल यह नहीं होता कि हम केवल पाँच वर्ष पर किसी-न-किसी प्रतिनिधि को चुन लें और उस प्रतिनिधि के कार्यक्रमों और क्रिया-कलाप के बारे में कोई भी सूचना वैधानिक तरीके से न प्राप्त करें और न प्राप्त करने का अधिकार रखें। होना तो यह चाहिए कि उस प्रतिनिधि के द्वारा लिये गये हर निर्णय में व्यापक पैमाने पर जनता केवल शामिल ही नहीं हो, बल्कि उसकी साक्रिय सहभागिता भी हो। यह तभी संभव है जब इस देश के हर नागरिक को सूचना पाने का अधिकार हो।

इस अधिकार को अमेरिका, स्वीडन, डेनमार्क, नॉर्वे, ऑस्ट्रिया, फ्रांस, नीदरलैंड्स, ऑस्ट्रेलिया, कनाडा और न्यूजीलैण्ड में मान्यता मिली हुई है। उस मान्यता में तीन बातें शामिल हैं :

(1) कोई भी व्यक्ति सरकार से कोई भी सूचना प्राप्त कर सकता है, भले ही उस व्यक्ति का उस सूचना के लेने और देने से कोई संबंध हो या नहीं हो।

(2) सरकार को एक निश्चित समय सीमा के अन्दर जानकारी देनी होती है और सरकार द्वारा इसकी अनदेखी करने पर किसी स्वतंत्र प्राधिकरण के समक्ष उसे अपील करने का आप से आप अधिकार मिल जाता है।

(3) राष्ट्रीय सुरक्षा और किसी व्यक्ति विशेष की निजी जिन्दगी से संबंधित सूचनाएँ किसी भी नागरिक को निर्गत नहीं करने का अधिकार सरकार का होता है।

पारदर्शिता का सवाल

जनतंत्र का अर्थ ही जनता द्वारा जनता के लिए शासन होता है। अतः सत्ता में पारदर्शिता होना यानी सबको यह जानकारी होना कि किस तरीके से वह संचालित हो रही है, आवश्यक है। लोकतंत्र में सत्ता पर काबिज लोग, उसके संचालक जनता के ट्रस्टी से ज्यादा कुछ भी नहीं

होते हैं। अत: सिर्फ चुनाव के वक्त अथवा एक खास अंतराल के बाद ही नहीं, बल्कि समय-समय पर जो हो रहा है और जो नहीं हो रहा है, उस पर सवाल करने का अधिकार जनता को होना चाहिए।

भारतीय प्रेस परिषद के अध्यक्ष न्यायमूर्ति पी.वी. सावंत के अनुसार 'सूचना प्राप्ति में बाधा ही समाज में भ्रष्टाचार का मुख्य कारण है। सूचना का अभाव ही गुप्त समझौतों, मनमाने फैसलों, चालबाजी और गबन को संभव बनाता है।' श्री सावंत का यह कहना बिल्कुल सही है कि सूचना तक आम आदमी की पहुँच एक बेहतर कीटाणुनाशक है और यह सार्वजनिक जीवन में भ्रष्टाचार को कम करेगा।

वर्तमान सूचना युग में, जब एक कोने में बैठ कर पूरी दुनिया में सूचनाएँ भेजी जा सकती हैं, सूचना को एक पूँजी माना जा रहा है। सामाजिक व आर्थिक असमानता का एक बहुत बड़ा कारण सूचना पर कुछ लोगों का एकाधिकार भी है। उत्पादकों, वितरकों एवं उपभोक्ताओं के बीच तथा प्रबंध करनेवालों एवं लाभ उठानेवालों के बीच सूचना का असमान प्रवाह सामाजिक-आर्थिक विषमता को जन्म देता है। वास्तव में यह संपूर्ण राजनीतिक शक्ति का सूचना - संपन्न व्यक्ति के पास केंद्रित हो जाना है। सूचना -संपन्न लोगों का यह तबका ही पूरे समाज पर छा जाता है और उसे संचालित करता है, जो लोकतंत्र की मूल अवधारणा के विरुद्ध है।

संबंधित उपयुक्त सूचना के अभाव में ही मीडिया को कई बार सरकार व उसकी संस्थाओं अथवा कुछ खास व्यक्तियों के खिलाफ आधारहीन व अप्रामाणिक रिपोर्टों का सहारा लेना पड़ता है। सूचना पाने के अधिकार के साथ ही यह सब न सिर्फ रुक जायेगा, बल्कि एक स्वस्थ वातावरण भी बनेगा, जिससे प्रशासन की विश्वसनीयता भी स्थापित होगी।

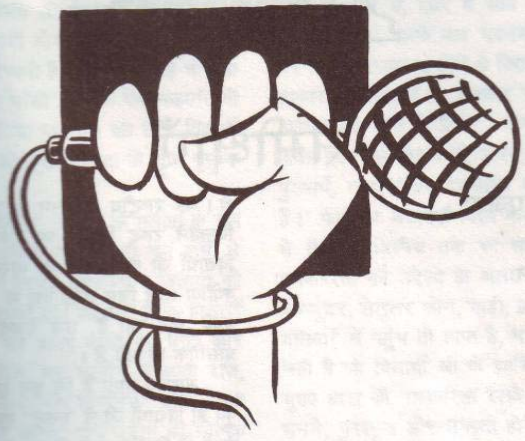

वर्तमान सूचना युग में, जब एक कोने में बैठ कर पूरी दुनिया में सूचनाएँ भेजी जा सकती हैं, सूचना को एक पूँजी माना जा रहा है। सामाजिक व आर्थिक असमानता का एक बहुत बड़ा कारण सूचना पर कुछ लोगों का एकाधिकार भी है। उत्पादकों, वितरकों एवं उपभोक्ताओं के बीच तथा प्रबंध करनेवालों एवं लाभ उठानेवालों के बीच सूचना का असमान प्रवाह सामाजिक-अर्थिक विषमता को जन्म देता है। वास्तव में यह संपूर्ण राजनीतिक शक्ति का सूचना - संपन्न व्यक्ति के पास केंद्रित हो जाना है। सूचना -संपन्न लोगों का यह तबका ही पूरे समाज पर छा जाता है और उसे संचालित करता है, जो लोकतंत्र की मूल अवधारणा के विरुद्ध है।

इस अधिकार का स्वरूप क्या हो? यह केवल भारतीय नागरिकों ही मिले या विदेशी नागरिकों को भी ? इसके बाद शासकीय गोपनीयता अधिनियम का स्वरूप क्या होगा? इस अधिकार के अपवाद क्या होंगे? इसका दायरा क्या होगा ? ये तमाम सवाल विचारणीय हैं और इन पर विभिन्न दृष्टिकोण भी हो सकते हैं। किंतु सूचना पाने का अधिकार मौलिक हो, इस पर कोई मतभेद नहीं हो सकता।

इस अधिकार को मौलिक किये जाने के साथ ही हमें एक ऐसी संस्था की जरूरत पड़ेगी, जो सूचना देने - न देने संबंधी विवादों का निपटारा करे। कौन-सी सूचनाएँ गोपनीय हैं और सूचना न देनेवाले अधिकारियों को क्या दंड दिया जाये, इसका फैसला उक्त संस्था करेगी। साथ ही हमें केंद्रीय स्तर से ले कर जिला एवं प्रखंड स्तर तक एक ऐसे ढाँचे की जरूरत पड़ेगी, जो सूचना को सहजता से उपलब्ध कराये। केंद्रीय स्तर पर अलग विभाग बना कर अथवा प्रत्येक विभाग में अलग सूचना अधिकारी की व्यवस्था करके यह किया जा सकता है।

आज जब हम 21वीं सदी की दहलीज पर अपनी आजादी की पचासवीं वर्षगाँठ मना रहें हैं, सूचना को मौलिक अधिकारों में शामिल किया जाना वस्तुत: हमारी आजादी की प्रासंगिकता के लिए भी आवश्यक है। जरूरत इस बात की है कि इसे समझनेवाले लोग देश भर में एक अभियान चला कर इस बहस को किसी कारगर नतीजे पर पहुँचाने का प्रयास करें। ■